अथ पञ्चमोध्यायः

पाँचमाँ करमसन्न्यास करमयोग अद्धयाय

अर्जुन उवाच

संन्यासं कर्मणां कृष्ण, पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं, तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्।। १

अर्जन बोल्ल्या

(करम-सन्न्यास करमयोग मैँ सै के आच्छा?)

छोड्डण नै कर्माँ नै किरसण, फेर जुड़ण नै बी कह ह्या सै।
जो सै आच्छा इन दोन्नूँ मैँ, एक बता वो मन्नै पक्का।। १

श्रीभगवानुवाच

संन्यासः कर्मयोगश्च, निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्, कर्मयोगो विशिष्यते।। २

स्रीभगुवान् बोल्ले

(करमयोग सै इन मैँ आच्छा)

त्याग करम का, करमयोग बी, कल्ल्याण करणियेँ दोन्नूँ सैँ।
इन मैँ पर करमत्याग तैँ सै, फळ छोड करम करणाँ आच्छा।। २

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी, यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो, सुखं बन्धात्प्रमुच्यते।। ३

समझो वो सै पक्का त्यागी, जो नाँ द्वेस करै नाँ चाह्वै।
इक दूज्जै के सदा विरोधी, राग-द्वेस-से भाव छोड कैँ।।
लाम्बी-लाम्बी बाज्जू आळे, अर्जन, माणस आसान्नी तैँ।
दुनियाँ कै बन्धन तैँ छूट्टै।। ३

सांख्ययोगौ पृथग् बालाः, प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम्।। ४

ग्यान-योग अर करम-योग नै, अलग कहैँ नादाँ, नाँ पण्डत।

एक पै बी टिक भली तह्रियाँ, दोन्नूँ का पावै फळ माणस।। ४

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं, तद्योगैरपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च, यः पश्यति स पश्यति।। ५

जो ततव जाणदे पावैं वो, जघाँ करमयोगी बी पावैं।
ग्यान-योग अर करम-योग नै, जो एक समझदा, वो समझै।। ५

संन्यासस्तु महाबाहो, दुःखमाप्तुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म, नचिरेणाधिगच्छति।। ६

ग्यान-योग तो मुस्कल पाणा, करम-योग बिन अर्जन, हो सै।
फळ नाँ चाह करम करदा मुनि, ब्रह्म ततव वो जल्दी पावै सै।। ६

योगयुक्तो विशुद्धात्मा, विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा, कुर्वन्नपि न लिप्यते।। ७

करम-योग पै चाल्लणियैं की, बुद्धी हो ज्यावै सै निर्म्मळ।
जीत्तै आप्णै आप्पै नै वो, जीत्तै सै वो इन्द्री आप्णी।
छोट्टे मोट्टे जड़ अर चेतन, सब चीज्जाँ का बण कैं आप्पा।
करदा बी नाँ ल्हिसदा कद्दे।। ७

नैव किंचित्करोमीति, युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्शृण्वन् स्पृशञ्जिघ्रन्, नश्नन् गच्छन् स्वपञ्श्वसन्।। ८

'नाँ ए किम्मे करूँ उरै सूँ', करम-योग पै चाल्लण आळा।
मान्नै न्यूँ जो तन्त जाणदा, देक्खे, सुणै, छुवै, अर सूँघै।
खावै, चाक्खै, जावै, सोवै, साँस्साँ लेवै काड्डै बाहर।। ८

प्रलपन् विसृजन् गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु, वर्तन्त इति धारयन्।। ९

बोल्लै, मूत्तै, हाग्गै, पकड़ै, पलकैं खोल्लै, मून्दै बी यो।
'इन्द्री इन्द्री के बिसयाँ पै, करदी आप्णा-आप्णा कारज'।।
या धार 'नहीं मैं कुछ करदा, इन्द्री आप्णा काम करैं सैं'।
मान्नै न्यूँ वो ततव समझदा।। ९

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि, सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन, पद्मपत्रमिवाम्भसा।। १०

कारज ब्रह्म जगत् के स्वामी, परमेसर पै अर्पित कर जो।
कारक भावाँ, राग द्वेस नै, छोड करै जो कारज सारे।
ल्हिसदा नाँ वो पाप पुण्य तैं, कमलपात ज्यूँ पाणी तैं सै।। १०

कायेन मनसा बुद्ध्या, केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति, सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये।। ११

तन तैं, मन तैं, बुद्धी तैं अर, सिर्फ इन्द्रियाँ तैं बी योग्गी।
करम करैं सैं आसक्ती तज, आप्णै चित की सुद्धी खात्तर।। ११

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा, शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण, फले सक्तो निबध्यते।। १२

करम-योग मैं आ ग्ग्या माणस, करमफळाँ नै तज वा सान्ती।
पावै सै जो हो सै आखर, मन की सुद्धी पहल्याँ होवै।।
पाच्छै हो सदसत् का निर्णै, फेर छूटदे कर्माँ के फळ।
करम न बान्धैं माणस नै सैं, न्यूँ छूट्या सान्ति परम पावै।।
करम-योग पै नाँ जो चाल्लै, फळ की खात्तर करम सबै कर।
फळ भोग्गण नै काया मैं आ, मिलदे माणस नै सब बन्धन।। १२

सर्वकर्माणि मनसा, संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही, नैव कुर्वन् न कारयन्।। १३

फळ की इच्छा जो नाँ करदा, ज्ञानकरममय सब करमाँ का।
मन तैं त्याग करै सै माणस, बस मैं कर कैं सारी इन्द्री।।
रहँदा सुख तैं आनँद मैं वो, नाँ ए करदा नाँ करवाँदा।
तन का मालक रहै नगर मैं, जिस मैं नौ दरवज्जे हों सैं।।
दो आक्ख्याँ के, दो कान्नाँ के, दो नाक अर मुँह एक हो सै।
गूह् सै काड्डै एक दुरज्जा, एक काढदी मूत्तर मोरी।
या ए दे सै ओर जलम बी।। १३

न कर्तृत्वं न कर्माणि, लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं, स्वभावस्तु प्रवर्तते।। १४

नाँ कर्तापण नाँ करमाँ नै, दुनियाँ कै सिरजै से परभू।
नाँ कर्माँ नै फळ तैँ जोड़ै, सुभाव दुनियाँ का तो यो सै।। १४

नादत्ते कस्यचित् पापं, न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं, तेन मुह्यन्ति जन्तवः।। १५

नाँ लेन्दा पाप किसै का अर, नाँ ए पुण्य किसै का परभू।
नाँसमझी तैँ ढँक्या ग्यान सै, उस तैँ मूरख बणदे माणस।। १५

ज्ञानेन तु तदज्ञानं, येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यवज्ज्ञानं, प्रकाशयति तत्परम्।। १६

पर वो नहीँ जाणना खुद नै, जिन का नष्ट हो ज्या ग्यान तैँ।
उन का सूरज की तहियाँ वो, ग्यान दिखावै परम ततव नै।। १६

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्, तन्निष्ठास्तत्परायणाः।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं, ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः।। १७

उस परम ततव पै स्थित बुद्धी, आळे साधक तन्मय हो ज्याँ।
उस मैँ ए वो टिक रम ज्याँ सैँ, परम गम्य सै वो ए उन का।
फेर न दुनियाँ मैँ वैँ आवैँ, जाण परम नै मिट ज्या उन की सैँ।
पाप-पुण्यमय काळस सारी।। १७

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च, पण्डिताः समदर्शिनः।। १८

(समदर्सी कोण हो सै)

विद्या पा कैँ नरम सरळ जो, उस ब्राह्मण मैँ, गाँ, हात्थी मैँ।
कुत्तै मैँ, उस नै खाणाळै, चिण्डाळाँ मैँ एक ततव नै।।
देक्खैँ समझैँ ग्यान्नी माणस, काया-कारण न्यारे-न्यारे।
आच्छे-माड़े मूरख समझैँ।। १८

इहैव तैर्जितः सर्गो, येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म, तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः।। १९

इत ए उन नै जीत्ती दुनियाँ, जिन का समता मैँ टिक ग्या मन।
दोसरहित अर सब हाल्लाँ मैँ, एक जिसा ए ब्रह्म रहै सै।
इस कारण वैँ टिके ब्रह्म मैँ।। १९

न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य, नोद्विजेत् प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो, ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः।। २०

नाँ खुस होवै प्रिय नै पा कैँ, नाँ हो दुखिया पा जो नाँ प्रिय।
थिर, नाँ बिचळी बुद्धी आळा, मोहरहित हो ब्रह्मग्ग्यानी।
ब्रह्मरूप मैँ ए टिक ज्या सै।। २०

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा, विन्दत्यात्मनि यत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा, सुखमक्षयमश्नुते।। २१

बाहर सैँ जो आत्मभाव तैँ, उन पाँ आँख जिसी इन्द्री के।
बिसयाँ मैँ नहीँ फँस्या जिस का, आप्पा वो सै पावै आप्णै।
भीत्तर जो सुख लीन ब्रह्म मैँ, अविनासी सुख पाया करदा।। २१

ये हि संस्पर्शजा भोगा, दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय, न तेषु रमते बुधः।। २२

(भोग्गाँ मैँ नाँ रमणाँ चहिये)

भोग्गण आळी बुद्धी, इन्द्री, अर बिसयाँ कै संजोगाँ तैँ।
होणाळे अनुभव देँ दुख सैँ, आदि अन्त बी उन का हो सै।
नाँ उन मैँ रमड़ै सै ग्यानी।। २२

शक्नोतीहैव यः सोढुं, प्राक् शरीरविमोक्षणात्।
कामक्रोधोद्भवं वेगं, स युक्तः स सुखी नरः।। २३

(योगी की महिमा)

सह सकदा इसै जलम मैँ जो, पहल्याँ या काया छूट्टण तैँ।
इच्छा गुस्सै तैँ होणाळी, तेज धार नै, सै वौ योगी।

वो आनँदमय माणस हो सै।। २३

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं, ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति।। २४

जो भीत्तर तैँ ए सुख पावै, भीत्तर आप्णै मस्त रहै सै।
भीत्तर जिस कै जोत जळै सै, वो योगी ब्रह्मरूप हो कैँ।
ब्रह्म मैँ ए लीन हो ज्या सै।। २४

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः, सर्वभूतहिते रताः।। २५

पावैँ मुक्ती जलम-मरण तैँ, ब्रह्म मैँ ए लीन होणा।
ग्यानी द्रस्टा परम ततव के, पाप पुन्य का कीच्चड़ धू कैँ।।
छिन-भिन होवैँ दुबिधा उन की, आप्णै ऊपर काब्बू रखदे।
सब भूत्ताँ कै हित मैँ लाग्गे।। २५

कामक्रोधवियुक्तानां, यतीनां यतचेतसाम्।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं, वर्तते विदितात्मनाम्।। २६

चाहत गुस्सै तैँ जो छूट्टे, संयम जतन सदा ए रखदे।
काब्बू मन पै राक्खण आळे, जीन्दे मर कैँ दोन्नूँ तह्नियाँ।
ब्रह्म मिलन सै होवै उन का, जाण लिया सै खुद नै जिन नै।। २६

स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा, नासाभ्यन्तरचारिणौ।। २७

(ध्यान की प्रक्रिया अर फळ)

सारी इन्द्री बाहर खुलदी, बाहर स्थित रस-से बिसयाँ तैँ।
संयोग बणा मन कै द्वारा, अनुभव करवाँदी बुद्धी नै।।
बिसयाँ नै कर बाहर उन का, चिन्तन नाँ कर मन कै द्वारा।
आद्धी-आद्धी मूँद आँख नै, लगा बीच मैँ भौहाँ कै अर।।
नास्साँ तैँ हो भीत्तर-बाहर, आन्दी जान्दी, रोक बाळ नै।
न्यूँ अर भर कुम्भक मैँ उस नै।। २७

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्, मुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो, यः सदा मुक्त एव सः।। २८

(बन्धन तैँ छूट्टया कोण हो सै)

बस मैँ कर कैँ इन्द्रिय मन नै, चिन्तन मनन परम का करदा।
'बन्धन छोड्डूँ', लक्ष्य बणा यो, त्यागै चाहत, डर, गुस्सा जो।
सदा मुक्त वो जीन्दा रहँदा।। २८

भोक्तारं यज्ञतपसां, सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां, ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति।। २९।।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगो नाम पञ्चमोध्यायः।।५।।

(इस साधना का फळ)

मन्नै अर्पित यग्ग्याँ नै अर, भगताँ नै जो करी तपस्या।
उन नै भोग्गूँ देव बण्या मैँ, पाळै उन नै उन के फळ दे।
इन्द्री तैँ जो पाए जावैँ, अर जो उन तैँ दूर घणै सैँ।
उन लोक्काँ का मैँ सूँ स्वामी, मैँ सूँ परम हितैसी मित्तर।
दुनियाँ मैँ जो सैँ उन सब का, जाण्याँ इस तह्नियाँ मैँ जो।
सान्ती पावै साधक माणस, सान्तिरूप मन्नै वो पावै।। २९

स्रीमती सीत्तादेब्बी अर स्रीस्रीनिवास सास्तरी कै बेट्टै सिवनारायण सास्तरी कै हरियाणी भास्सा कै गीत्तायन काब्ब्यभास्य मैँ पाँचमाँ अध्याय पूरा होया।।५।।

पूर्वसलोकयोग २०४ + २९ = २३३